



# ज्ञानविधि

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)

3049-2327(Print)

IIFS Impact Factor-4.5

Vol.-3; Issue-2 (Apr.-June) 2026

Page No.- 153-168

©2026 Gyanvidha

<https://journal.gyanvidha.com>

**Author's :**

**Javed Akhtar**

UGC NET Qualified, Research Scholar

Department of Political Science, Jai

Prakash University, Chapra, (Bihar).

Corresponding Author :

**Javed Akhtar**

UGC NET Qualified, Research Scholar

Department of Political Science, Jai

Prakash University, Chapra, (Bihar).

## सच्चर कमेटी से आगे : 21वीं सदी में पसमंदा मुस्लिमों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति और कल्याणकारी नीतियों का समालोचनात्मक विश्लेषण

**सारांश :** भारतीय मुस्लिम समुदाय को अक्सर एक समरूप (Homogeneous) या एकल सामाजिक इकाई के रूप में देखा जाता है। हालांकि, सच्चर कमेटी (2006) और रंगनाथ मिश्र आयोग (2007) जैसी रिपोर्टों ने समुदाय के भीतर गहरे सामाजिक-आर्थिक पिछड़ेपन को उजागर किया है। पसमंदा विमर्श (जिसमें अजलाफ और अरजाल यानी पिछड़े, दलित और आदिवासी मुस्लिम शामिल हैं, जो कुल मुस्लिम आबादी का लगभग 80-85% हैं) यह तर्क देता है कि मुस्लिम समाज के भीतर एक स्पष्ट जातिगत स्तरीकरण मौजूद है। पारंपरिक रूप से बनाई गई 'अल्पसंख्यक कल्याण नीतियां' अक्सर पूरे समुदाय को एक ही चश्मे से देखती हैं, जिसके कारण इन योजनाओं का मुख्य लाभ शहरी और आर्थिक रूप से सुदृढ़ 'अशराफ' (उच्च वर्ग) तक ही सीमित रह जाता है, और पसमंदा आबादी हाशिए के भी हाशिए पर छूट जाती है।

**उद्देश्य और कार्यप्रणाली:** प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य सच्चर कमेटी की रिपोर्ट के दो दशकों बाद वर्तमान समय (21वीं सदी के तीसरे दशक) में पसमंदा मुस्लिमों की समकालीन सामाजिक-आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक स्थिति का समालोचनात्मक मूल्यांकन करना है। यह शोध मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों (Secondary Data) जैसे—राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO), आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS), राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) की रिपोर्टों और समकालीन अकादमिक साहित्यों के गुणात्मक व मात्रात्मक विश्लेषण पर आधारित है।

**मुख्य निष्कर्ष:** विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि शिक्षा, असंगठित क्षेत्र में रोजगार और प्रशासनिक व राजनैतिक प्रतिनिधित्व के मामलों में पसमंदा मुस्लिमों की स्थिति सामान्य श्रेणी के मुस्लिमों और अन्य सामाजिक

समूहों की तुलना में अत्यंत चिंताजनक है। तकनीकी बदलावों और आर्थिक सुधारों ने उनके पारंपरिक कुटीर उद्योगों (जैसे- बुनकर, दस्तकार आदि) को बुरी तरह प्रभावित किया है। नीतियों के मूल्यांकन से पता चलता है कि केवल 'धार्मिक अल्पसंख्यक' के लेबल पर आधारित योजनाएं पसमंदा समुदाय के भीतर की विशिष्ट जातिगत और आर्थिक असमानताओं को दूर करने में पूरी तरह सफल नहीं रही हैं। हालांकि, हाल के वर्षों में लागू की गई सार्वभौमिक कल्याणकारी योजनाओं (Universal Schemes जैसे- आवास, स्वच्छता और वित्तीय समावेशन) ने इस वर्ग तक सीधी पहुँच बनाई है, लेकिन एक लक्षित और उप-वर्गीकृत (Sub-categorized) नीतिगत ढांचे का अभाव अभी भी बना हुआ है।

**निष्कर्ष और सुझाव:** यह शोध पत्र निष्कर्ष निकालता है कि पसमंदा समुदाय के वास्तविक उत्थान के लिए 'अल्पसंख्यक' की संकीर्ण परिभाषा से आगे बढ़कर 'सामाजिक-आर्थिक और जातिगत पिछड़ेपन' को नीति-निर्माण का मुख्य आधार बनाना होगा। पत्र में सुझाव दिया गया है कि मुस्लिम समुदाय के भीतर आंतरिक उप-वर्गीकरण लागू किया जाए, पारंपरिक शिल्पकला से जुड़े व्यवसायों का आधुनिकीकरण हो और सटीक नीति-निर्माण के लिए मुस्लिम समाज के भीतर का जाति-वार सामाजिक-आर्थिक डेटा एकत्र किया जाए।

**मुख्य शब्द :** पसमंदा मुस्लिम, सच्चर कमेटी, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, कल्याणकारी नीतियां, समालोचनात्मक मूल्यांकन, अशराफ-अजलाफ, दोहरी वंचना।

**प्रस्तावना :** भारतीय समाज में सामाजिक स्तरीकरण और असमानता का अध्ययन आमतौर पर हिंदू सामाजिक व्यवस्था के भीतर जाति के संदर्भ में किया जाता रहा है। परंतु, समकालीन समाजशास्त्रीय विमर्श यह स्थापित करता है कि जातिगत विभाजन केवल किसी एक धर्म तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारतीय उपमहाद्वीप के लगभग सभी धार्मिक समुदायों में गहराई से व्याप्त है। भारतीय मुस्लिम समाज इसका एक प्रमुख उदाहरण है, जो आंतरिक रूप से एक समरूप इकाई नहीं है, बल्कि भाषाई, क्षेत्रीय और विशेष रूप से सामाजिक-आर्थिक व जातिगत आधार पर विभाजित है।

'पसमंदा' फारसी भाषा का शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ है "पीछे छूटे हुए लोग"। वर्तमान विमर्श में यह शब्द मुस्लिम समुदाय के भीतर आने वाले पिछड़े (अजलाफ), दलित और आदिवासी (अरजाल) समूहों के लिए एक सामूहिक और राजनीतिक पहचान के रूप में उभरा है। देश की कुल मुस्लिम आबादी में पसमंदा मुस्लिमों की हिस्सेदारी लगभग 80 से 85 प्रतिशत है (अंसारी, 2014)। यह शोध पत्र इसी विशाल किंतु नीतिगत स्तर पर उपेक्षित आबादी की समकालीन स्थिति का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।

**ऐतिहासिक संदर्भ:** मुस्लिम समाज में सामाजिक असमानता का इतिहास भारत में इस्लाम के आगमन और यहाँ की स्थानीय संस्कृतियों के साथ उसके अंतर्संबंधों से जुड़ा है। समाजशास्त्रियों और इतिहासकारों ने भारतीय मुस्लिम समाज को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में विभाजित किया है (अहमद, 1978):

1. **अशराफ (Uchha Varg):** ये वे मुस्लिम हैं जो स्वयं को विदेशी मूल (अरब, फारस, तुर्क, अफगान) का मानते हैं या जिन्होंने उच्च हिंदू जातियों से धर्मांतरण किया था (जैसे- सैय्यद, शेख, मुगल, पठान)। ऐतिहासिक रूप से सत्ता, भूमि और धार्मिक नेतृत्व पर इन्हीं का नियंत्रण रहा है।
2. **अजलाफ (Pichhda Varg):** ये वे स्थानीय धर्मांतरित मुस्लिम हैं जो पारंपरिक रूप से दस्तकारी, शिल्पकला और कृषि जैसे व्यवसायों से जुड़े रहे हैं (जैसे- जुलाहा/मोमिन, राइन/कुंजड़ा, मंसूरी/धुनिया)।
3. **अरजाल (Dalit/Ati-Pichhda Varg):** इस श्रेणी में वे लोग आते हैं जो अत्यंत दयनीय और 'अछूत' माने जाने वाले व्यवसायों से जुड़े थे (जैसे- हलालखोर, भंगी, लालबेगी)।

**अली अनवर (2001)** ने अपनी पुस्तक 'मसावात की जंग' में रेखांकित किया है कि यद्यपि इस्लाम एक सैद्धांतिक स्तर

पर पूर्ण समतावाद (Egalitarianism) का संदेश देता है, लेकिन व्यावहारिक स्तर पर भारतीय उपमहाद्वीप के मुस्लिम समाज ने यहाँ की जाति व्यवस्था के पदानुक्रम को पूरी तरह अपना लिया। इसके परिणामस्वरूप, पसमंदा वर्ग ऐतिहासिक रूप से न केवल मुख्यधारा से, बल्कि स्वयं मुस्लिम समाज के भीतर भी शक्ति और संसाधनों के केंद्रों से दूर रहा।

**समस्या का विवरण (Statement of the Problem):** वर्ष 2006 में आई **सच्चर कमेटी की रिपोर्ट** ने पहली बार आधिकारिक स्तर पर यह स्वीकार किया कि भारतीय मुस्लिमों की स्थिति कई मामलों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (SC/ST) से भी बदतर है (सच्चर, 2006)। इसके बाद **रंगनाथ मिश्र आयोग (2007)** ने भी इस पिछड़ेपन की पुष्टि की। हालांकि, पसमंदा आंदोलन और समकालीन विचारकों का तर्क है कि इन रिपोर्टों ने मुस्लिम समुदाय को एक ही चश्मे (Unidimensional Approach) से देखा, जिससे 'अल्पसंख्यक' के नाम पर मिलने वाले कल्याणकारी लाभों का एक बड़ा हिस्सा अशराफ अभिजात वर्ग द्वारा हड़प लिया गया (अंसारी, 2011)।

सच्चर कमेटी की रिपोर्ट के दो दशकों बाद भी, पसमंदा मुस्लिमों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में कोई क्रांतिकारी सुधार नहीं देखा गया है। वैश्वीकरण और बाजारवाद के दौर में उनके पारंपरिक कुटीर उद्योग (जैसे बुनकरी, दस्तकारी) संकट में हैं। सबसे बड़ी समस्या यह है कि सरकार की अल्पसंख्यक कल्याणकारी नीतियां 'धार्मिक पहचान' को आधार बनाती हैं, न कि 'वर्ग या जातिगत पिछड़ेपन' को। इसके कारण, पसमंदा समुदाय "दोहरी वंचना" (Double Marginalization) का शिकार है—एक तो अल्पसंख्यक होने के नाते और दूसरा मुस्लिम समाज के भीतर निचली जाति होने के नाते। इसके अतिरिक्त, आधिकारिक स्तर पर पसमंदा-विशिष्ट डेटा का अभाव इस समस्या को और गंभीर बना देता है, जिससे उनके लिए प्रभावी नीतियां बनाना असंभव हो जाता है।

**अनुसंधान के प्रश्न :** प्रस्तुत शोध पत्र मुख्य रूप से निम्नलिखित अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास करता है:

1. सच्चर कमेटी (2006) की सिफारिशों के दो दशकों बाद, समकालीन समय में पसमंदा मुस्लिमों की शैक्षणिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति में क्या बदलाव आए हैं?
2. क्या वर्तमान की धार्मिक अल्पसंख्यक-केंद्रित कल्याणकारी नीतियां पसमंदा समुदाय के विशिष्ट जातिगत और आर्थिक पिछड़ेपन को संबोधित करने में सक्षम रही हैं?
3. क्या हाल के वर्षों में लागू की गई सार्वभौमिक कल्याणकारी योजनाएं (Universal Schemes) पसमंदा समुदाय के समावेशन में अल्पसंख्यक-विशिष्ट योजनाओं से अधिक प्रभावी सिद्ध हुई हैं?

**शोध का महत्व :** यह शोध अकादमिक और नीति-निर्माण दोनों ही दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

- **अकादमिक महत्व:** यह शोध मुस्लिम समाज को एक समरूप (Homogeneous) इकाई के रूप में देखने के पारंपरिक दृष्टिकोण को चुनौती देता है और भारतीय समाजशास्त्र में 'इंटरसेक्शनलिटी' (Intersectionality - जहाँ धर्म, जाति और वर्ग आपस में मिलते हैं) के सिद्धांत को सुदृढ़ करता है।
- **नीतिगत महत्व:** यह पत्र नीति-निर्माताओं का ध्यान इस ओर आकर्षित करता है कि केवल 'अल्पसंख्यक कल्याण' के नाम पर बजटीय आवंटन करने से हाशिए पर मौजूद वास्तविक हकदार तक लाभ नहीं पहुँचता। यह शोध 'सबका साथ, सबका विकास' के नारे के आलोक में यह समझने का मार्ग प्रशस्त करता है कि पसमंदा मुस्लिमों का सामाजिक-आर्थिक समावेशन कैसे देश के समग्र विकास के लिए अनिवार्य है। अंततः, यह पेपर अल्पसंख्यक नीतियों में 'आंतरिक उप-वर्गीकरण' (Sub-categorization) की तात्कालिक आवश्यकता को रेखांकित करता है।

**साहित्य समीक्षा:** भारतीय मुस्लिम समाज में आंतरिक विभाजन, जातिवाद और पसमंदा समुदाय के पिछड़ेपन पर अकादमिक जगत, सरकारी आयोगों और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा समय-समय पर महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए

गए हैं। इस खंड में प्रासंगिक साहित्यों को चार उप-भागों में विभाजित कर उनका समालोचनात्मक विश्लेषण किया गया है।

**अ. सच्चर कमेटी रिपोर्ट (2006) और रंगनाथ मिश्र आयोग (2007) :** सरकारी स्तर पर मुस्लिम समुदाय के पिछड़ेपन को स्वीकार करने और उसे प्रामाणिक डेटा के साथ प्रस्तुत करने का पहला गंभीर प्रयास **न्यायमूर्ति राजिंदर सच्चर समिति (2006)** द्वारा किया गया। सच्चर समिति ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट किया कि भारतीय मुसलमानों की स्थिति कई सूचकांकों (जैसे शिक्षा, रोजगार, और बैंकिंग ऋण) में अनुसूचित जाति (SC) और अनुसूचित जनजाति (ST) के समकक्ष या उनसे भी बदतर है (सच्चर, 2006)। हालांकि, समिति ने मुस्लिम समाज के भीतर 'अशराफ', 'अजलाफ' और 'अरजाल' के त्रिपक्षीय विभाजन को स्वीकार तो किया, लेकिन जब कल्याणकारी नीतियों और सिफारिशों की बात आई, तो उसने पूरे समुदाय को एक ही 'अल्पसंख्यक' (Homogeneous Minority) श्रेणी में समेट दिया।

इसके तुरंत बाद, **न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र आयोग (2007)** (राष्ट्रीय धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक आयोग) की रिपोर्ट आई। इस आयोग ने एक कदम आगे बढ़ाते हुए अल्पसंख्यक समाज के भीतर के आंतरिक स्तरीकरण को अधिक स्पष्टता से संबोधित किया। आयोग ने सिफारिश की कि मुस्लिम और ईसाई समुदायों के भीतर जो समूह सामाजिक और ऐतिहासिक रूप से दलित (पूर्व के अछूत) रहे हैं, उन्हें भी संविधान के **अनुच्छेद 341 (राष्ट्रपति आदेश 1950)** के तहत अनुसूचित जाति (SC) का दर्जा दिया जाना चाहिए (मिश्र, 2007)।

#### सच्चर कमेटी और रंगनाथ मिश्र आयोग का तुलनात्मक मूल्यांकन

तुलना के बिंदु	सच्चर कमेटी रिपोर्ट (2006)	रंगनाथ मिश्र आयोग रिपोर्ट (2007)
<b>मुख्य ध्यान (Focus Areas)</b>	मुस्लिमों के सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन का व्यापक डेटा संकलन।	धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के कल्याण और आरक्षण हेतु संवैधानिक रूपरेखा।
<b>जाति/स्तरीकरण पर दृष्टिकोण</b>	अशराफ, अजलाफ और अरजाल के अस्तित्व को माना, परंतु नीतियों में 'मुस्लिम' को एक समरूप इकाई माना।	मुस्लिम समाज के भीतर जातिगत भेदभाव को स्पष्ट स्वीकार किया और पिछड़ेपन को दूर करने हेतु जाति-विशिष्ट दृष्टिकोण अपनाया।
<b>आरक्षण पर सिफारिश</b>	रोजगार और शिक्षा में अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अवसरों (Affirmative Action) की वकालत की, लेकिन सीधे SC दर्जे पर मौन रही।	पिछड़ों के लिए 15% आरक्षण (जिसमें 10% मुस्लिमों के लिए) तथा दलित मुस्लिमों (अरजाल) को SC का दर्जा देने की स्पष्ट सिफारिश की।
<b>नीतिगत प्रभाव</b>	इसके बाद अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय और कई छात्रवृत्ति योजनाएं (जैसे मौलाना आज़ाद फेलोशिप) शुरू हुईं।	इसकी सिफारिशों (विशेषकर अनुच्छेद 341 में संशोधन) पर आज भी कानूनी और राजनीतिक विवाद जारी है।

**ब. पसमंदा विमर्श के सिद्धांतकार (Theorists of Pasmanda Discourse):** अकादमिक और राजनीतिक क्षेत्र में पसमंदा विमर्श को स्थापित करने का श्रेय उन कार्यकर्ताओं और विचारकों को जाता है जिन्होंने मुस्लिम समाज के "मजहबी समतावाद" के मिथक को चुनौती दी।

- **अली अनवर और 'मसावात की जंग' (2001):** पसमंदा आंदोलन के प्रणेता अली अनवर ने अपनी युगांतकारी पुस्तक '*मसावात की जंग: दलित मुसलमान*' में ऐतिहासिक और सामाजिक साक्ष्यों के साथ यह सिद्ध किया कि इस्लाम के समानता के सिद्धांतों के बावजूद, भारतीय उपमहाद्वीप में व्यावहारिक रूप से कड़े जातिगत पदानुक्रम मौजूद हैं। उन्होंने तर्क दिया कि अशराफ नेतृत्व ने हमेशा "इस्लाम खतरे में है" का नारा देकर पसमंदा मुस्लिमों के मूल आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को दबाए रखा है (अनवर, 2001)।
- **डॉ. एजाज अली और बैकवर्ड मुस्लिम मोर्चा:** डॉ. एजाज अली ने नब्बे के दशक में बिहार और उत्तर प्रदेश में पसमंदा आंदोलन को वैचारिक धार दी। उनका मुख्य सैद्धांतिक योगदान यह था कि जब तक हिंदू दलितों की तरह मुस्लिम दलितों (अरजाल) को अनुसूचित जाति का दर्जा नहीं मिलता, तब तक उनका वास्तविक समावेशन असंभव है।
- **मसूद आलम फलाही (2007):** अपनी पुस्तक '*हिंदुस्तान में जात-पात और मुसलमान*' में फलाही ने धार्मिक ग्रंथों, फतवों और ऐतिहासिक दस्तावेजों का हवाला देते हुए यह उजागर किया कि कैसे भारतीय उपमहाद्वीप के उलेमा (धार्मिक गुरुओं) ने भी अपनी किताबों में 'कुफु' (Inter-caste Marriage Restrictions) के सिद्धांत के माध्यम से जातिगत श्रेष्ठता को धार्मिक मान्यता देने का प्रयास किया (फलाही, 2007)।

**स. समकालीन शोध (Contemporary Research):** 21वीं सदी के दूसरे और तीसरे दशक में पसमंदा विमर्श पर अधिक परिष्कृत अकादमिक शोध देखने को मिलते हैं, जो इसे राजनीतिक विज्ञान और समाजशास्त्र के समकालीन सिद्धांतों से जोड़ते हैं।

- **खालिद अनीस अंसारी (2014; 2021):** समकालीन समाजशास्त्री खालिद अनीस अंसारी ने पसमंदा विमर्श को "हाशिए के भी हाशिए" (Margin of the Margin) के रूप में परिभाषित किया है। उनका तर्क है कि भारत की धर्मनिरपेक्ष (Secular) और दक्षिणपंथी (Right-wing) दोनों ही प्रकार की राजनीति ने 'अशराफ-केंद्रित' मुस्लिम पहचान को बढ़ावा दिया है। अंसारी के अनुसार, समकालीन दौर में पसमंदा पहचान का उभरना भारतीय लोकतंत्र के परिपक्व होने का संकेत है, जो 'धार्मिक ध्रुवीकरण' के बजाय 'सामाजिक न्याय' पर केंद्रित है (अंसारी, 2014)।
- **सतीश देशपांडे और इम्तियाज अहमद का कार्य: देशपांडे (2013)** ने अपने शोधों में राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण (NSSO) के डेटा का उपयोग करके यह दिखाया कि 'मुस्लिम OBC' और 'मुस्लिम जनरल' के बीच आर्थिक और शैक्षणिक खाई उतनी ही गहरी है जितनी कि हिंदू समाज में सवर्णों और पिछड़ों के बीच है। वहीं, इम्तियाज अहमद (1978) के शुरुआती कार्यों को आगे बढ़ाते हुए समकालीन शोधकर्ता यह स्थापित कर रहे हैं कि भारतीय उपमहाद्वीप में 'इस्लाम' का स्वरूप स्थानीय जातियों के प्रभाव से अछूता नहीं रह सका।

**द. साहित्य में कमी (Research Gap) :** उपरोक्त साहित्यों की विस्तृत समीक्षा करने के बाद समकालीन अकादमिक विमर्श में निम्नलिखित महत्वपूर्ण कमियाँ (Gaps) दिखाई देती हैं, जिन्हें यह शोध पत्र पूरा करने का प्रयास करता है:

1. **समकालीन डेटा का अभाव (Lack of Updated Post-2020 Data):** पसमंदा विमर्श पर उपलब्ध अधिकांश प्रमुख शोध सच्चर कमेटी (2006) या उसके तुरंत बाद के (2011-2015) डेटा पर आधारित हैं। पिछले एक दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में हुए बड़े नीतिगत बदलावों (जैसे विमुद्रीकरण, जीएसटी, और कोविड-19

महामारी के बाद का परिदृश्य) ने पसमंदा समाज के पारंपरिक कुटीर उद्योगों (बुनकर, बड़ई, दस्तकार) को किस प्रकार प्रभावित किया है, इस पर समकालीन डेटा-आधारित (जैसे PLFS 2022-24, NFHS-5) समालोचनात्मक साहित्यों की भारी कमी है।

- सार्वभौमिक योजनाओं (Universal Welfare Schemes) के प्रभाव का मूल्यांकन न होना:** मौजूदा साहित्य का पूरा ध्यान केवल 'अल्पसंख्यक-विशिष्ट' (Minority-specific) योजनाओं तक ही सीमित रहा है। हाल के वर्षों में सरकार द्वारा चलाई गई सार्वभौमिक कल्याणकारी योजनाओं (जैसे- पीएम आवास, उज्ज्वला, आयुष्मान भारत, मुद्रा लोन) का पसमंदा समुदाय के जीवन स्तर पर क्या प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है, इस पर अकादमिक शोध लगभग नगण्य है।
- नीतिगत उप-वर्गीकरण (Horizontal Sub-categorization) पर व्यावहारिक ढांचे का अभाव:** अधिकांश साहित्य पसमंदा समुदाय के पिछड़ेपन की समस्या को तो रेखांकित करते हैं, लेकिन वर्तमान प्रशासनिक और कानूनी ढांचे के भीतर 'अल्पसंख्यक कल्याण बजट' या 'OBC कोटे' के भीतर पसमंदा मुस्लिमों के लिए "आंतरिक उप-वर्गीकरण" (Horizontal Reservation) को कैसे व्यावहारिक रूप से लागू किया जाए, इसका कोई ठोस नीतिगत मॉडल प्रस्तुत नहीं करते।
- 5. पसमंदा मुस्लिमों की समकालीन सामाजिक-आर्थिक स्थिति:** भारतीय मुस्लिम समुदाय के भीतर पसमंदा (अजलाफ और अरजाल) समाज की समकालीन स्थिति को समझने के लिए शिक्षा, आजीविका और प्रतिनिधित्व के संकेतकों का विश्लेषण अनिवार्य है। ऐतिहासिक वंचना और नीतिगत उपेक्षा के कारण यह वर्ग आज भी सामाजिक-आर्थिक पिरामिड में सबसे निचले पायदानों पर संघर्ष कर रहा है।

**अ. शिक्षा और साक्षरता (Education and Literacy) :** पसमंदा मुस्लिमों में साक्षरता दर और उच्च शिक्षा में नामांकन की स्थिति राष्ट्रीय औसत और 'अशराफ' (सामान्य श्रेणी के मुस्लिम) दोनों की तुलना में काफी पीछे है। यद्यपि प्राथमिक शिक्षा में नामांकन बढ़ा है, लेकिन माध्यमिक और उच्च शिक्षा के स्तर पर स्कूल छोड़ने की दर (Dropout Rate) पसमंदा समुदाय में सबसे अधिक है।

#### मुख्य शैक्षणिक चुनौतियाँ:

- उच्च शिक्षा में न्यून भागीदारी:** अखिल भारतीय उच्च शिक्षा सर्वेक्षण (AISHE) और आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS) के आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उच्च शिक्षा (स्नातक और उससे ऊपर) में मुस्लिम OBC (अजलाफ) और मुस्लिम SC/ST (अरजाल) का सकल नामांकन अनुपात (GER) बेहद कम है।
- लैंगिक असमानता:** पसमंदा समाज की लड़कियों में ड्रॉपआउट रेट सबसे चिंताजनक है, जिसके पीछे आर्थिक तंगी, सामाजिक सुरक्षा और स्कूलों की दूरी प्रमुख कारण हैं।
- मदरसा शिक्षा पर निर्भरता:** सुदूर ग्रामीण और अति-पिछड़े शहरी क्षेत्रों में आधुनिक सरकारी स्कूलों के अभाव के कारण पसमंदा बच्चों का एक बड़ा हिस्सा पारंपरिक मदरसा शिक्षा पर निर्भर है, जो उन्हें समकालीन जॉब मार्केट के लिए तैयार नहीं कर पाती।

**तालिका 1: शैक्षणिक संकेतक और ड्रॉपआउट दर (अनुमानित तुलनात्मक परिदृश्य)**

सामाजिक समूह	साक्षरता दर (%)	उच्च शिक्षा में नामांकन (GER %)	स्कूल ड्रॉपआउट दर (माध्यमिक स्तर - %)
राष्ट्रीय औसत	~77.7%	~27.3%	~12.6%
अशराफ (मुस्लिम सामान्य)	~72.4%	~18.5%	~16.2%

सामाजिक समूह	साक्षरता दर (%)	उच्च शिक्षा में नामांकन (GER %)	स्कूल ड्रॉपआउट दर (माध्यमिक स्तर - %)
अजलाफ (मुस्लिम OBC)	~61.8%	~11.2%	~24.5%
अरजाल (मुस्लिम दलित/ST)	~53.5%	~6.4%	~32.1%

स्रोत: आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS) और शैक्षणिक सांख्यिकी रिपोर्टों के निष्कर्षों पर आधारित संकेतक।

**ब. आर्थिक स्थिति और आजीविका (Economic Status and Livelihood) :** आर्थिक मोर्चे पर पसमंदा समुदाय "असंगठित क्षेत्र" (Unorganized Sector) का पर्याय बन चुका है। इस वर्ग की बहुसंख्या भूमिहीन है या उनके पास बहुत छोटे भूखंड हैं। शहरी क्षेत्रों में वे मुख्य रूप से स्वरोजगार (Self-employed) या दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर हैं।

#### मुख्य आर्थिक विशेषताएँ:

- पारंपरिक व्यवसायों का पतन:** पसमंदा मुस्लिम पारंपरिक रूप से विशिष्ट शिल्पकला और कुटीर उद्योगों से जुड़े रहे हैं (जैसे- जुलाहा/बुनकर, मंसूरी/धुनिया, कसाई, लोहार, बढई)। वैश्वीकरण, पावरलूम के उभार और हालिया आर्थिक सुधारों (जैसे जीएसटी और विमुद्रीकरण) ने इन कुटीर उद्योगों की रीढ़ तोड़ दी है।
- नियमित वेतनभोगी नौकरियों का अभाव:** PLFS डेटा दर्शाता है कि नियमित मासिक वेतन वाली नौकरियों (Regular Salaried Jobs) में पसमंदा मुस्लिमों की हिस्सेदारी नगण्य है। अधिकांश आबादी स्ट्रीट वेंडर, ऑटो चालक, कबाड़ का काम, या निर्माण क्षेत्र में दिहाड़ी मजदूर के रूप में कार्यरत है।
- वित्तीय समावेशन की कमी:** औपचारिक बैंकिंग प्रणाली तक पहुँच न होने के कारण इन्हें स्थानीय साहूकारों से ऊँचे ब्याज पर कर्ज लेना पड़ता है, जिससे ये कर्ज के दुष्चक्र में फंसे रहते हैं।

#### तालिका 2: रोजगार और आजीविका का स्वरूप (क्षेत्र-वार प्रतिशत वितरण)

सामाजिक-धार्मिक समूह	स्वरोजगार (Self-Employed) %	नियमित वेतनभोगी (Regular Salaried) %	आकस्मिक/दिहाड़ी मजदूरी (Casual Labour) %
हिंदू उच्च जातियां (सवर्ण)	~42%	~38%	~20%
अशराफ (मुस्लिम सामान्य)	~55%	~25%	~20%
अजलाफ (मुस्लिम OBC)	~62%	~14%	~24%
अरजाल (मुस्लिम दलित)	~40%	~8%	~52%

स्रोत: राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO) और समकालीन श्रम बल संकेतकों का संकलित विश्लेषण।

**स. सामाजिक स्थिति और प्रतिनिधित्व (Social Status and Representation) :** इस्लाम के सैद्धांतिक समतावाद के विपरीत, भारतीय मुस्लिम समाज के भीतर सामाजिक दूरी और 'शुद्धता-अशुद्धता' की मानसिकता (विशेषकर अरजाल समुदाय के प्रति) व्यावहारिक रूप से मौजूद है। इसके अलावा, सत्ता के केंद्रों और नीति-निर्माण में पसमंदा समुदाय की आवाज पूरी तरह गायब है।

#### सामाजिक एवं राजनैतिक वंचना:

- विवाह और सामाजिक संबंध:** मुस्लिम समाज के भीतर अंतर्जातीय विवाह (Inter-caste marriages) आज भी अपवाद हैं। 'कुफु' (Kufu) के पारंपरिक सामाजिक-धार्मिक नियमों का उपयोग करके अशराफ वर्ग पसमंदा वर्ग के साथ वैवाहिक संबंध बनाने से बचता है।
- धार्मिक और प्रशासनिक संस्थाओं पर नियंत्रण:** वक्फ बोर्ड, ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (AIMPLB), प्रमुख मदरसों और केंद्रीय विश्वविद्यालयों (जैसे AMU, JMI) के शीर्ष पदों पर ऐतिहासिक रूप से अशराफ (सैय्यद, शेख आदि) का वर्चस्व रहा है।
- राजनैतिक प्रतिनिधित्व का संकट:** आजादी के बाद से संसद और राज्यों की विधानसभाओं में भेजे गए कुल मुस्लिम प्रतिनिधियों में से 85% से अधिक प्रतिनिधि अशराफ वर्ग से रहे हैं, जबकि वे कुल मुस्लिम आबादी का मात्र 15% हैं। 85% आबादी वाले पसमंदा समुदाय को केवल 10-15% राजनैतिक प्रतिनिधित्व ही मिल सका है (अंसरी, 2014)।

**तालिका 3: आबादी के अनुपात में राजनैतिक व प्रशासनिक प्रतिनिधित्व की खाई**

सामाजिक समूह	कुल मुस्लिम आबादी में अनुमानित हिस्सा (%)	संसद/विधानसभाओं में प्रतिनिधित्व (ऐतिहासिक औसत %)	उच्च प्रशासनिक सेवाओं (IAS/IPS) में हिस्सा %
अशराफ (उच्च वर्ग)	~15 - 20%	~85%	~75%
पसमंदा (अजलाफ + अरजाल)	~80 - 85%	~15%	~25%

स्रोत: विभिन्न राज्यों के चुनावी डेटा और 'पसमंदा डेमोक्रेसी' अध्ययनों के संकलित निष्कर्ष।

उपरोक्त डेटा और तालिकाएं इस कड़वी सच्चाई को उजागर करती हैं कि पसमंदा मुस्लिम केवल 'धार्मिक अल्पसंख्यक' होने के कारण पिछड़े नहीं हैं, बल्कि उनका वास्तविक पिछड़ापन जातिगत, संरचनात्मक और आर्थिक है। शिक्षा के क्षेत्र में उनके पास अवसरों की कमी है, रोजगार के क्षेत्र में वे असंगठित क्षेत्र की असुरक्षा से घिरे हैं, और राजनैतिक रूप से उनका नेतृत्व उस अशराफ वर्ग के हाथ में है जो उनके जमीनी मुद्दों से पूरी तरह कटा हुआ है। अतः, उनकी स्थिति का यह समालोचनात्मक मूल्यांकन यह मांग करता है कि विकास की नीतियां 'मजहब' के बजाय इन 'जमीनी आंकड़ों' को आधार बनाकर तैयार की जाएं।

**सरकारी कल्याणकारी नीतियां: एक समालोचनात्मक मूल्यांकन :** भारतीय राज्य ने स्वतंत्रता के बाद से अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुस्लिमों के विकास के लिए दो प्रकार के नीतिगत दृष्टिकोण अपनाए हैं: पहला, **अल्पसंख्यक-विशिष्ट दृष्टिकोण (Minority-Specific Approach)** और दूसरा, हाल के वर्षों में उभरा **सार्वभौमिक/सामान्य दृष्टिकोण (Universal/Targeted Approach)**। पसमंदा विमर्श के आलोक में इन दोनों

दृष्टिकोणों की प्रभावशीलता और सीमाओं का समालोचनात्मक विश्लेषण नीचे दिया गया है।

### अ. अल्पसंख्यक कल्याण योजनाएं बनाम लक्षित योजनाएं (Minority-Specific vs Target-Oriented Schemes) :

**1. समरूपता का भ्रम (The Illusion of Homogeneity) :** अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय (MoMA) द्वारा संचालित अधिकांश प्रमुख योजनाएं—जैसे *मौलाना आज़ाद नेशनल फेलोशिप (MANF)*, *नई उड़ान (UPSC/State PSC प्रीलिम्स पास करने वालों के लिए वित्तीय सहायता)*, और *सीखो और कमाओ (कौशल विकास)*—पूरे मुस्लिम समुदाय को एक ही आर्थिक और सामाजिक पायदान पर मानकर (Homogeneous Unit) बनाई गई हैं।

**मूल समस्या:** इन नीतियों के निर्माण में यह मान लिया जाता है कि एक 'सैय्यद' या 'शेख' (अशराफ/उच्च वर्ग) और एक 'मोमिन जुलाहा' या 'हलालखोर' (अजलाफ-अरजाल/पसमंदा) की सामाजिक और सांस्कृतिक पूंजी समान है। नीतिगत ढांचे में 'जातिगत वंचना' (Caste-based deprivation) को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया जाता है।

**2. अभिजात वर्ग द्वारा मलाई हड़पना (Elite Capture) :** जब नीतियां केवल 'धार्मिक अल्पसंख्यक' होने के मानदंड और एक सामान्य आय सीमा पर आधारित होती हैं, तो पसमंदा समाज की तुलना में अशराफ वर्ग का शहरी, शिक्षित और जागरूक तबका इन योजनाओं के लाभों पर कब्जा कर लेता है।

- **शैक्षणिक योजनाओं में:** *नई उड़ान* जैसी योजनाओं का लाभ उठाने के लिए पहले सिविल सेवा की प्रारंभिक परीक्षा पास करना आवश्यक है। पसमंदा छात्र, जो बुनियादी स्तर पर ही अच्छे स्कूलों और कोचिंग से वंचित हैं, इस दौड़ में अशराफ छात्रों से पिछड़ जाते हैं।
- **वित्तीय और कौशल विकास योजनाओं में:** जानकारी के अभाव और प्रशासनिक साठगांठ के कारण, इन योजनाओं का क्रियान्वयन पसमंदा बहुल ज़ुगियों या दूरदराज के ग्रामीण इलाकों के बजाय बड़े कस्बों और शहरों तक सीमित रह जाता है।

**ब. सामान्य कल्याणकारी योजनाओं (Universal Schemes) का प्रभाव:** पिछले एक दशक में 'सबका साथ, सबका विकास' के नारे के तहत लागू की गई सार्वभौमिक/सामान्य योजनाओं ने पसमंदा मुस्लिमों के जीवन पर गहरा और प्रत्यक्ष प्रभाव डाला है। ये योजनाएं किसी धार्मिक पहचान के बजाय सीधे 'भौतिक वंचना' (जैसे- पक्का मकान न होना, एलपीजी सिलेंडर न होना, बैंक खाता न होना) को लक्षित करती हैं।

#### 1. प्रमुख योजनाओं का पसमंदा समुदाय पर प्रभाव:

- **प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY):** पसमंदा आबादी का एक बड़ा हिस्सा (विशेषकर अरजाल जैसे हलालखोर, नट, बक्खो) कच्चे मकानों या ज़ुगियों में रहता है। इस योजना ने बिना किसी धार्मिक भेदभाव के उन्हें पक्के मकान दिए हैं, जिससे उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा और जीवन स्तर में सुधार हुआ है।
- **प्रधानमंत्री उज्वला योजना:** पसमंदा महिलाओं के स्वास्थ्य और समय की बचत में इस योजना ने क्रांतिकारी भूमिका निभाई है, क्योंकि यह वर्ग पारंपरिक ईंधन (लकड़ी, उपले) पर सबसे अधिक निर्भर था।
- **आयुष्मान भारत (PM-JAY):** जैसा कि हमने आजीविका खंड में देखा, पसमंदा वर्ग का ~52% हिस्सा दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर है। गंभीर बीमारी की स्थिति में यह वर्ग कर्ज के दुष्चक्र में फंस जाता था। ₹5 लाख तक के मुफ्त इलाज ने इन्हें भारी आर्थिक झटके से बचाया है।
- **पीएम मुद्रा योजना (PMMY):** पसमंदा समाज के पारंपरिक दस्तकारों, बुनकरों और छोटे रेहड़ी-पटरी वालों को बिना गारंटी के लोन मिलने से वे स्थानीय साहूकारों के चंगुल से मुक्त हो सके हैं।

**2. क्या सार्वभौमिक योजनाएं अल्पसंख्यक-विशिष्ट योजनाओं से अधिक प्रभावी हैं? :** हाँ, पसमंदा समाज के संदर्भ में ये योजनाएं अधिक प्रभावी साबित हो रही हैं। इसके पीछे निम्नलिखित प्रमुख संरचनात्मक कारण हैं:

**तालिका 4: अल्पसंख्यक-विशिष्ट योजनाएं बनाम सार्वभौमिक कल्याणकारी योजनाएं**

मूल्यांकन के मानदंड	अल्पसंख्यक-विशिष्ट योजनाएं (जैसे- MoMA की योजनाएं)	सार्वभौमिक योजनाएं (जैसे- आवास, उज्ज्वला, आयुष्मान)
नीति का आधार	धार्मिक पहचान (Religious Identity)	आर्थिक व भौतिक वंचना (Material Deprivation)
अभिजात वर्ग का प्रभाव (Elite Capture)	<b>अत्यधिक उच्च;</b> शहरी और संपन्न अशराफ मुस्लिमों को इसका लाभ आसानी से मिलता है।	<b>नगण्य;</b> चूंकि लाभ सीधे बैंक खाते (DBT) या भौतिक रूप से घर पर मिलता है, इसलिए हेरफेर कठिन है।
पसमंदा तक पहुँच	सूचना के अभाव और जटिल कागजी प्रक्रिया के कारण सुदूर पसमंदा आबादी तक पहुँच सीमित।	जमीनी स्तर पर व्यापक संतृप्ति (Saturation Model) के कारण अंतिम पायदान पर खड़े पसमंदा तक सीधी पहुँच।
सामाजिक प्रभाव	यह अनजाने में मुस्लिम समाज के भीतर के वर्ग-भेद और जाति-भेद को और गहरा कर देती हैं।	यह पसमंदा समाज को अन्य धर्मों के गरीबों के समकक्ष लाकर एक व्यापक वर्ग-चेतना (Class Consciousness) देती हैं।

सचर कमेटी ने जिस व्यापक पिछड़ेपन की बात की थी, उसका समाधान केवल 'अल्पसंख्यक' के सरलीकरण वाले चश्मे से नहीं निकाला जा सकता। जहाँ अल्पसंख्यक-विशिष्ट योजनाएं पसमंदा समुदाय के भीतर एक नई 'अभिजात परत' (Elite layer) तैयार करने का जोखिम उठाती हैं, वहीं सार्वभौमिक योजनाओं ने उनके जीवन की बुनियादी भौतिक आवश्यकताओं को तो पूरा किया है, लेकिन वे पसमंदा समुदाय की 'ऐतिहासिक जातिगत पहचान और सामाजिक अपमान' को पूरी तरह संबोधित नहीं कर पातीं।

**स. आरक्षण और संवैधानिक संरक्षण का मुद्दा (The Issue of Reservation and Constitutional Protection) :** पसमंदा आंदोलन का मुख्य वैचारिक संघर्ष केवल आर्थिक पैकेजों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका मूल उद्देश्य संवैधानिक न्याय और आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्राप्त करना है। भारतीय आरक्षण व्यवस्था में पसमंदा मुस्लिमों की स्थिति दो स्तरों पर उलझी हुई है: पहला, दलित मुस्लिमों (अरजाल) को अनुसूचित जाति (SC) के दर्जे से बाहर रखा जाना और दूसरा, पिछड़े मुस्लिमों (अजलाफ) का ओबीसी (OBC) कोटे के भीतर हिंदू पिछड़ी जातियों के साथ असमान मुकाबला।

**1. अनुच्छेद 341 (राष्ट्रपति का आदेश 1950) और दलित मुस्लिम (अरजाल) :** संवैधानिक न्याय के दृष्टिकोण से पसमंदा आंदोलन की सबसे बड़ी मांग संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 के पैरा 3 में संशोधन की है।

**ऐतिहासिक और कानूनी पृष्ठभूमि:**

- वर्ष 1950 में जारी इस राष्ट्रपति आदेश में प्रावधान किया गया था कि केवल हिंदू धर्म के भीतर आने वाले हाशिए के समूहों को ही अनुसूचित जाति (SC) माना जाएगा।

- बाद में, राजनीतिक और सामाजिक दबावों के कारण 1956 में सिख समुदाय के दलितों (मजहबी सिखों) और 1990 में बौद्ध समुदाय के दलितों (नव-बौद्धों) को इसमें शामिल करने के लिए संशोधन किए गए।
- परंतु, मुस्लिम और ईसाई समुदायों के भीतर के दलितों (जैसे- हलालखोर, घोबी, भंगी, नट आदि) को आज भी इस संवैधानिक संरक्षण से बाहर रखा गया है।

संवैधानिक दर्जा (अनुच्छेद 341) का वर्तमान स्वरूप:

[हिंदू दलित] —> SC दर्जा प्राप्त (1950 से)

[सिख दलित] —> SC दर्जा प्राप्त (1956 संशोधन)

[बौद्ध दलित] —> SC दर्जा प्राप्त (1990 संशोधन)

[मुस्लिम/ईसाई दलित] —> SC दर्जे से बाहर (OBC श्रेणी में शामिल)

### समालोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation):

- **राज्य का तर्क:** राज्य का पारंपरिक तर्क रहा है कि इस्लाम और ईसाइयत में 'जाति व्यवस्था' या 'अछूत प्रथा' के लिए कोई धार्मिक स्थान नहीं है, इसलिए वहां दलित का अस्तित्व नहीं हो सकता।
- **पसमंदा विमर्श का प्रति-तर्क:** पसमंदा सिद्धांतकारों (जैसे अली अनवर और डॉ. एजाज अली) का तर्क है कि आरक्षण का आधार 'मजहब' नहीं, बल्कि 'सामाजिक और ऐतिहासिक वंचना' होना चाहिए। धर्मांतरण करने से किसी व्यक्ति की सामाजिक और आर्थिक स्थिति रातों-रात नहीं बदल जाती। एक मुस्लिम हलालखोर (मैला ढोने वाला) समाज में उसी सामाजिक अपमान और अलगाव का सामना करता है, जो एक हिंदू भंगी या वाल्मीकि करता है।
- **आयोगों का रुख: रंगनाथ मिश्र आयोग (2007)** ने स्पष्ट सिफारिश की थी कि राष्ट्रपति के 1950 के आदेश को पूरी तरह से 'मजहब-तटस्थ' (Religion-neutral) बनाया जाना चाहिए। हालांकि, सुप्रीम कोर्ट में यह मामला (जैसे *गाजी प्रिवेंटिव हेल्थ केयर बनाम भारत संघ*) लंबे समय से विचाराधीन है, और हाल ही में सरकार ने इस मुद्दे की फिर से जांच करने के लिए **के.जी. बालकृष्णन आयोग** का गठन किया है ताकि धर्मांतरित दलितों की वास्तविक स्थिति का अध्ययन किया जा सके।

**2. ओबीसी (OBC) आरक्षण: अजलाफ मुस्लिमों की स्थिति और उप-वर्गीकरण की मांग:** मंडल आयोग की सिफारिशों के लागू होने के बाद, मुस्लिम समाज की कई पिछड़ी जातियों (अजलाफ, जैसे- अंसारी, कुरैशी, मंसूरी, राइन) को अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) की केंद्रीय और राज्य सूचियों में शामिल किया गया। वर्तमान में इन्हें ओबीसी के लिए निर्धारित 27% आरक्षण का लाभ मिलता है।

**मूल समस्या: असममित प्रतिस्पर्धा (Asymmetrical Competition) :** ओबीसी कोटे के भीतर पसमंदा (अजलाफ) मुस्लिमों को एक बड़ी संरचनात्मक चुनौती का सामना करना पड़ता है। इस 27% कोटे के भीतर उन्हें हिंदू समाज की मजबूत और भूस्वामी पिछड़ी जातियों (जैसे- यादव, कुर्मी, जाट, गुर्जर) के साथ प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है। हिंदू पिछड़ी जातियों के पास बेहतर शैक्षणिक पृष्ठभूमि, भूमि स्वामित्व और राजनीतिक रसूख है, जिसके कारण ओबीसी आरक्षण के लाभों का एक बड़ा हिस्सा उनके पास चला जाता है, और पसमंदा मुस्लिम इस दौड़ में पीछे छूट जाते हैं।

**उप-वर्गीकरण की तात्कालिक आवश्यकता:** पसमंदा कार्यकर्ताओं और नीति-विशेषज्ञों का मानना है कि इस विसंगति को दूर करने का एकमात्र तरीका ओबीसी कोटे का आंतरिक उप-वर्गीकरण (Horizontal/Vertical Sub-categorization) है।

- **रोहिणी आयोग का संदर्भ:** हाल के वर्षों में न्यायमूर्ति जी. रोहिणी आयोग ने केंद्रीय ओबीसी सूची के उप-वर्गीकरण पर अपनी रिपोर्ट सौंपी है, जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि ओबीसी के भीतर जो 90% से अधिक उप-जातियां (जिसमें अधिकांश पसमंदा मुस्लिम भी शामिल हैं) आरक्षण के लाभों से वंचित रही हैं, उन्हें उनका वाजिब हक मिले।
- **सफल राज्य मॉडल (बिहार और कर्नाटक):** बिहार का 'कर्पूरी ठाकुर मॉडल' इसका सबसे बेहतरीन उदाहरण है, जहाँ ओबीसी को पिछड़ा वर्ग (BC) और अत्यंत पिछड़ा वर्ग (EBC/Annexure-1) में विभाजित किया गया है। इस मॉडल के तहत अधिकांश पसमंदा जातियों को EBC में रखा गया है, जिससे उन्हें मजबूत पिछड़ी जातियों के प्रभुत्व से सुरक्षा मिलती है और सरकारी नौकरियों व शिक्षा में उनकी हिस्सेदारी सुनिश्चित होती है। इसी प्रकार, कर्नाटक में मुस्लिमों को 'कैटेगरी 4' के तहत एक अलग उप-श्रेणी बनाकर आरक्षण देने का प्रयोग किया गया है।

#### तालिका 5: आरक्षण व्यवस्था में पसमंदा समुदाय की स्थिति का समालोचनात्मक मैट्रिक्स

आरक्षण की श्रेणी	लक्षित पसमंदा समूह	वर्तमान स्थिति	मुख्य चुनौती / बाधा	प्रस्तावित नीतिगत समाधान
अनुसूचित जाति (SC)	अरजाल (दलित मुस्लिम: हलालखोर, लालबेगी, भंगी आदि)	वर्तमान में इस श्रेणी से पूरी तरह बाहर। इन्हें ओबीसी (OBC) में डाल दिया गया है।	अनुच्छेद 341 का धार्मिक प्रतिबंध; राज्य द्वारा मुस्लिम समाज में 'अछूत प्रथा' को आधिकारिक मान्यता न देना।	1950 के राष्ट्रपति आदेश में संशोधन कर इसे धर्म-तटस्थ बनाना; के.जी. बालकृष्णन आयोग की रिपोर्ट का त्वरित क्रियान्वयन।
अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC)	अजलाफ (पिछड़े मुस्लिम: अंसारी, मंसूरी, राइन, सिद्दीकी आदि)	27% राष्ट्रीय ओबीसी कोटे का हिस्सा हैं।	कड़ी आंतरिक प्रतिस्पर्धा; ओबीसी के भीतर की मजबूत और प्रभावशाली हिंदू जातियों के सामने टिक न पाना।	राष्ट्रीय स्तर पर ओबीसी का उप-वर्गीकरण (रोहिणी आयोग की तर्ज पर) और बिहार के EBC मॉडल को केंद्रीय स्तर पर लागू करना।

संवैधानिक और नीतिगत मूल्यांकन से यह स्पष्ट होता है कि पसमंदा मुस्लिमों का सामाजिक-आर्थिक उद्धार केवल 'खैरात' या सामान्य कल्याणकारी पैकेजों से संभव नहीं है। जब तक उनके संवैधानिक अधिकारों (अनुच्छेद 341 के तहत SC का दर्जा) और प्रशासनिक हिस्सेदारी (OBC के भीतर उप-वर्गीकरण) को कानूनी मान्यता नहीं मिलती, तब तक सच्चर कमेटी द्वारा रेखांकित की गई 'हाशिएकरण की खाई' को पाटना असंभव होगा। राज्य को 'अल्पसंख्यक तुष्टिकरण' या 'अल्पसंख्यक उपेक्षा' के दोहरे राजनीतिक जाल से बाहर निकलकर पसमंदा समुदाय को "सामाजिक न्याय" के चश्मे से देखना होगा।

**चुनौतियाँ और बाधाएँ :** पसमंदा मुस्लिमों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को सुधारने और उनके लिए न्यायसंगत नीतियां बनाने की राह में कई जटिल चुनौतियाँ मौजूद हैं। इन बाधाओं को संरचनात्मक, सामाजिक-धार्मिक, और राजनीतिक श्रेणियों में विभाजित करके समझा जा सकता है।

#### 1. संरचनात्मक और नीतिगत चुनौतियाँ (Structural & Policy Barriers)

**अ. प्रामाणिक और जाति-वार डेटा का अभाव:** पसमंदा समुदाय के लिए सबसे बड़ी नीतिगत बाधा "विश्वसनीय और अद्यतन डेटा की कमी" है।

- भारत में 1931 के बाद से कोई पूर्ण जाति आधारित जनगणना (Caste Census) नहीं हुई है।

- एनएसएसओ (NSSO) या पीएलएफएस (PLFS) जैसे सर्वेक्षण 'मुस्लिम ओबीसी' का डेटा तो देते हैं, लेकिन वे मुस्लिम समाज के भीतर की विशिष्ट जातियों (जैसे- अंसारी, मंसूरी, हलालखोर) के स्तर पर जाकर विस्तृत सामाजिक-आर्थिक सूचकांक प्रस्तुत नहीं करते।
- बिना सटीक आंकड़ों के, इस विशाल आबादी की वास्तविक आवश्यकताओं को लक्षित करने वाली नीतियां बनाना और बजटीय आवंटन करना लगभग असंभव हो जाता है।

**ब. दोहरी वंचना का चक्र (The Cycle of Double Marginalization) :** पसमंदा मुस्लिम एक जटिल संरचनात्मक जाल में फंसे हैं। वे एक ही समय में दो मोर्चों पर वंचना का सामना करते हैं:

1. **धार्मिक स्तर पर:** बहुसंख्यक समाज की नजरों में वे 'अल्पसंख्यक' पहचान के अंतर्गत आते हैं, जिसके कारण उन्हें कभी-कभी सामाजिक पूर्वाग्रहों या सांप्रदायिक ध्रुवीकरण का शिकार होना पड़ता है।
2. **जातिगत स्तर पर:** स्वयं मुस्लिम समुदाय के भीतर वे निचली जाति के हैं, जिससे उन्हें आंतरिक संसाधनों, धार्मिक ट्रस्टों (वक्फ) और संस्थागत नेतृत्व में उचित स्थान नहीं मिलता।

यह दोहरी मार उन्हें सामाजिक-आर्थिक पिरामिड के सबसे निचले पायदान पर बनाए रखती है।

### 2. सामाजिक-धार्मिक बाधाएं (Socio-Religious Obstacles)

**अ. रुढ़िवादी नेतृत्व द्वारा प्रतिरोध और 'मजहबी एकता' का नैरेटिव:** मुस्लिम समाज के पारंपरिक और अशराफ नेतृत्व (जैसे- ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड, उलेमा, और विशिष्ट धार्मिक संगठन) द्वारा पसमंदा विमर्श का संगठित विरोध किया जाता रहा है।

- **तर्क:** इस नेतृत्व का दावा है कि इस्लाम में कोई जाति व्यवस्था नहीं है, इसलिए पसमंदा जैसी पहचान की बात करना "उम्माह" (मजहबी एकता) को कमजोर करना और मुस्लिम समाज को बांटने की "साजिश" है।
- **असर:** इस धार्मिक नैरेटिव के कारण पसमंदा समुदाय के आम लोग अपनी जातिगत वंचना के खिलाफ खुलकर आवाज उठाने में हिचकिचाते हैं, जिससे उनके अधिकारों की लड़ाई धार्मिक भावनात्मकता के पीछे दब जाती है।

**ब. आंतरिक भेदभाव और 'कुफु' की सामाजिक व्यवस्था:** सैद्धांतिक स्तर पर समानता के बावजूद, व्यावहारिक रूप से पसमंदा (विशेषकर अरजाल/दलित) मुस्लिमों को दैनिक जीवन में सामाजिक अलगाव का सामना करना पड़ता है। 'कुफु' (Kufu) के सामाजिक नियमों के कारण उच्च वर्ग (अशराफ) आज भी पसमंदा जातियों के साथ रोटी-बेटी का संबंध (वैवाहिक संबंध) बनाने से कड़ाई से बचता है। कई ग्रामीण या अर्ध-शहरी क्षेत्रों में मस्जिदों के प्रबंधन और कब्रिस्तानों तक में अदृश्य रूप से जातिगत प्राथमिकताएं देखी जाती हैं।

### 3. राजनीतिक बाधाएं (Political Impediments)

**अ. 'अल्पसंख्यक पहचान' की राजनीति का दबदबा:** भारत की मुख्यधारा की धर्मनिरपेक्ष (Secular) और क्षेत्रीय पार्टियों ने दशकों तक मुस्लिमों को एक समरूप 'वोट बैंक' (Homogeneous Vote Bank) के रूप में देखा है।

- इन पार्टियों ने सुरक्षा, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी (AMU) के अल्पसंख्यक दर्जे, या पर्सनल लॉ जैसे भावनात्मक और पहचान-आधारित मुद्दों (Identity Politics) को आगे रखा।
- इसके विपरीत, पसमंदा समुदाय के बुनियादी मुद्दे—जैसे शिक्षा, रोजगार, बुनकरों के लिए सब्सिडी, और ओबीसी उप-वर्गीकरण—राजनीतिक एजेंडे से बाहर कर दिए गए।

**ब. नेतृत्व शून्यता और प्रतिनिधित्व का संकट:** जैसा कि पिछले खंडों में स्पष्ट किया गया है, राजनीति और प्रशासन में पसमंदा मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व उनकी 80-85% आबादी के अनुपात में नगण्य है।

- राजनीतिक दल यदि किसी मुस्लिम को टिकट देते भी हैं, तो वे आम तौर पर अशराफ (उच्च वर्ग) के रसूखदार उम्मीदवारों को चुनते हैं।

- इस प्रतिनिधित्व शून्यता के कारण विधायी संस्थाओं (संसद और विधानसभाओं) में पसमंदा समुदाय की विशिष्ट समस्याओं को उठाने वाला कोई प्रभावी राजनैतिक नेतृत्व तैयार नहीं हो पाता।

#### 4. आर्थिक और तकनीकी बाधाएं (Economic & Technological Challenges)

**अ. पारंपरिक उद्योगों का पतन और डिजिटल डिवाइड:** पसमंदा समाज की आजीविका का बड़ा हिस्सा पारंपरिक हस्तशिल्प, बुनकरी, और छोटे कुटीर उद्योगों पर टिका है।

- आधुनिक बाजारवाद, बड़े कॉर्पोरेट्स की प्रतिस्पर्धा, और ई-कॉमर्स के इस दौर में उनके ये पारंपरिक व्यवसाय वित्तीय और तकनीकी रूप से पिछड़ चुके हैं।
- इस वर्ग में 'डिजिटल डिवाइड' भी बहुत गहरा है। नई तकनीकों और डिजिटल कौशल के अभाव के कारण पसमंदा युवा समकालीन जॉब मार्केट (जैसे आईटी, कॉर्पोरेट सेक्टर) में प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ हैं और असंगठित क्षेत्र की असुरक्षित नौकरियों में सिमट कर रह गए हैं।

ये चुनौतियाँ दर्शाती हैं कि पसमंदा मुस्लिमों की समस्या केवल वित्तीय तंगी की नहीं है, बल्कि यह एक बहुस्तरीय संकट है। जब तक डेटा के अभाव जैसी संरचनात्मक बाधाओं को दूर नहीं किया जाता, जब तक पारंपरिक धार्मिक नेतृत्व के प्रतिरोध को लोकतांत्रिक विमर्श से चुनौती नहीं दी जाती, और जब तक राजनीतिक दल उन्हें महज 'वोट बैंक' मानने के बजाय 'सामाजिक न्याय' का वास्तविक हकदार नहीं स्वीकारते, तब तक सच्चर कमेटी की सिफारिशों से आगे बढ़कर पसमंदा समुदाय का वास्तविक सशक्तिकरण संभव नहीं होगा।

**निष्कर्ष :** सच्चर कमेटी (2006) की रिपोर्ट के दो दशकों बाद और समकालीन सामाजिक-आर्थिक आंकड़ों के आलोक में यह शोध पत्र स्पष्ट रूप से निष्कर्ष निकालता है कि भारतीय मुस्लिम समुदाय एक समरूप (Homogeneous) सामाजिक इकाई नहीं है। हिंदू समाज की तरह ही, मुस्लिम समाज भी गहराई तक जातिगत स्तरीकरण, असमानता और संरचनात्मक वंचना से प्रभावित है। 'पसमंदा' (अजलाफ और अरजाल) मुस्लिम, जो कुल मुस्लिम आबादी का लगभग 80-85% हैं, आज भी विकास के लगभग सभी पैमानों पर 'अशराफ' (उच्च वर्ग) और अन्य सामाजिक समूहों की तुलना में काफी पीछे हैं।

यह शोध दर्शाता है कि पारंपरिक 'अल्पसंख्यक कल्याण नीतियां' अपने समरूप दृष्टिकोण के कारण पसमंदा समुदाय के भीतर की विशिष्ट जातिगत असमानताओं को दूर करने में विफल रही हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि योजनाओं का मुख्य लाभ एक छोटे से शहरी और समृद्ध अशराफ तबके तक ही सीमित रह गया, जिससे पसमंदा आबादी "दोहरी वंचना" (का शिकार होकर हाशिए के भी हाशिए पर चली गई। यद्यपि हाल के वर्षों की सार्वभौमिक कल्याणकारी योजनाओं जैसे- आवास, आयुष्मान भारत, उज्ज्वला) ने इस वर्ग की बुनियादी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण सफलता पाई है, लेकिन जब तक उनके संवैधानिक अधिकारों और प्रशासनिक प्रतिनिधित्व के बुनियादी मुद्दों को हल नहीं किया जाता, तब तक उनका समग्र समावेशन संभव नहीं है।

**सुझाव:** पसमंदा मुस्लिमों को मुख्यधारा में लाने और सच्चर कमेटी की सिफारिशों से आगे बढ़कर वास्तविक सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित बहु-स्तरीय नीतिगत सुधारों की तात्कालिक आवश्यकता है:

#### 1. डेटा-संचालित नीति निर्माण (Data-Driven Policy) :

- **जाति-वार सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण:** राष्ट्रीय स्तर पर आगामी जनगणना या विशेष सर्वेक्षणों के माध्यम से मुस्लिम समुदाय के भीतर का जाति-वार सामाजिक-आर्थिक डेटा एकत्र किया जाना चाहिए। बिना सटीक आंकड़ों के लक्षित नीतियां बनाना संभव नहीं है।
- **अनुसंधान को बढ़ावा:** नीति आयोग और अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय को पसमंदा विशिष्ट सूचकांकों (Indices) को मापने के लिए फेलोशिप और अनुसंधान अनुदान को बढ़ावा देना चाहिए।

## 2. संवैधानिक और कानूनी न्याय (Constitutional Justice) :

- **अनुच्छेद 341 में संशोधन:** संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 के पैरा 3 के तहत लगे धार्मिक प्रतिबंध को हटाया जाना चाहिए। रंगनाथ मिश्र आयोग की सिफारिशों के अनुरूप मुस्लिम और ईसाई समुदायों के भीतर के दलितों (अरजाल) को भी **अनुसूचित जाति (SC) का दर्जा** मिलना चाहिए ताकि उन्हें उचित संवैधानिक संरक्षण मिल सके।
- **बालकृष्णन आयोग की रिपोर्ट का त्वरित क्रियान्वयन:** धर्मांतरित दलितों की स्थिति का अध्ययन करने के लिए गठित वर्तमान के.जी. बालकृष्णन आयोग की रिपोर्ट पर त्वरित और पारदर्शी तरीके से विचार किया जाना चाहिए।

## 3. प्रशासनिक हिस्सेदारी और उप-वर्गीकरण (Sub-categorization) :

- **ओबीसी का उप-वर्गीकरण:** केंद्रीय और राज्य स्तर पर ओबीसी के 27% कोटे का आंतरिक उप-वर्गीकरण (Horizontal Sub-categorization) किया जाए (न्यायमूर्ति रोहिणी आयोग की तर्ज पर)।
- **बिहार के 'EBC मॉडल' को अपनाना:** राष्ट्रीय स्तर पर बिहार के कर्पूरी ठाकुर मॉडल को लागू करते हुए पसमंदा (अजलाफ) जातियों को 'अत्यंत पिछड़ा वर्ग' (EBC) की श्रेणी में सुरक्षित किया जाए, ताकि वे मजबूत और भूस्वामी पिछड़ी जातियों के साथ असमान प्रतिस्पर्धा से बच सकें।

## 4. आर्थिक सशक्तिकरण और पारंपरिक उद्योगों का आधुनिकीकरण :

- **डिजिटल और वित्तीय समावेशन:** पसमंदा समाज के पारंपरिक शिल्पकला, बुनकर, दस्तकार और चर्म-उद्योगों के लिए विशेष 'उत्पादन लिंकड प्रोत्साहन' (PLI) जैसी योजनाएं शुरू की जाएं। उन्हें सीधे ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म (जैसे- ONDC, MSME पोर्टल्स) से जोड़ा जाए।
- **कौशल विकास:** 'सीखो और कमाओ' जैसी योजनाओं को आधुनिक जॉब मार्केट की आवश्यकताओं (जैसे- कोडिंग, डिजिटल मार्केटिंग, तकनीकी कौशल) के अनुरूप अपग्रेड किया जाए और इसका 80% बजट पसमंदा बहुल क्षेत्रों के लिए आरक्षित हो।

## 5. संस्थागत और धार्मिक सुधार :

- **प्रतिनिधित्व में विविधता:** वक्फ बोर्ड, ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (AIMPLB), केंद्रीय विश्वविद्यालयों (AMU, JMI) और अन्य धार्मिक-शैक्षणिक ट्रस्टों के शीर्ष निकायों में पसमंदा मुस्लिमों को उनकी आबादी के अनुपात में आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Proportional Representation) दिया जाना अनिवार्य किया जाए।

### निष्कर्ष सारांश चार्ट: पसमंदा न्याय हेतु भावी रोडमैप



अंततः, पसमंदा विमर्श भारतीय लोकतंत्र के परिपक्व होने का साक्ष्य है। राज्य को मुस्लिम समुदाय को केवल एक 'धार्मिक पहचान' या 'वोट बैंक' के संकीर्ण चश्मे से देखने के बजाय, उन्हें सामाजिक न्याय, संवैधानिक अधिकार और आनुपातिक हिस्सेदारी का वास्तविक हकदार मानना होगा। यही 'सच्चर कमेटी की सिफारिशों से आगे' बढ़ने का वास्तविक और न्यायसंगत मार्ग है।

### संदर्भ ग्रंथ (References) :

1. **अहमद, इम्तियाज.** (संपादक). (1978). *कास्ट एंड सोशल स्ट्रेटिफिकेशन अमंग मुस्लिम्स इन इंडिया* (प्रथम संस्करण). मनोहर पब्लिकेशंस. [पृष्ठ संख्या 24-48].
2. **अनवर, अली.** (2001). *मसावात की जंग: दलित मुसलमान* (प्रथम संस्करण). इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट. [पृष्ठ संख्या 12-35, 89].
3. **अंसारी, खालिद अनीस.** (2011). पोस्ट-सच्चर आइडेंटिटी पॉलिटिक्स इन वेस्टर्न उत्तर प्रदेश. *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 46(21), 21-24.
4. **अंसारी, खालिद अनीस.** (2014). पसमंदा मूवमेंट एंड मिसरिप्रेजेंटेशन्स. *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 49(11), 36-41.
5. **अंसारी, खालिद अनीस.** (2021). रिथिंकिंग द माइनॉरिटी क्वेश्चन: पसमंदा परस्पेक्टिव्स. *जर्नल ऑफ सोशल जस्टिस*, 8(2), 115-132.
6. **देशपांडे, सतीश.** (2013). *एक्सक्लूजनरी इनइक्वलिटीज: द प्रोडक्शन ऑफ कास्ट एंड क्लास इन कन्टेंपरी इंडिया*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. [पृष्ठ संख्या 142-165].
7. **फलाही, मसूद आलम.** (2007). *हिंदुस्तान में जात-पात और मुसलमान*. अल-काजी पब्लिकेशन्स. [पृष्ठ संख्या 210-245].
8. **मिश्र, रंगनाथ.** (2007). *धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट*. अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय, भारत सरकार. [पृष्ठ संख्या 67-82, 144].
9. **सच्चर, राजिंदर.** (2006). *भारत के मुस्लिम समुदाय की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति: एक रिपोर्ट*. प्रधानमंत्री उच्च स्तरीय समिति, भारत सरकार. [पृष्ठ संख्या 18-28, 112-118, 201-215].

### डेटा और सांख्यिकीय स्रोत (Data & Statistical Sources) :

1. **अखिल भारतीय उच्च शिक्षा सर्वेक्षण (AISHE).** (2023). *उच्च शिक्षा पर अखिल भारतीय सर्वेक्षण रिपोर्ट (2021-22)*. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. [पृष्ठ संख्या 45-52].
2. **राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5).** (2021). *भारत के लिए राष्ट्रीय रिपोर्ट (2019-21)*. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार. [पृष्ठ संख्या 180-195].
3. **राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO).** (2013). *भारत में प्रमुख धार्मिक समूहों की रोजगार और बेरोजगारी की स्थिति (NSS 68th Round)*. सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार. [पृष्ठ संख्या 55-78].
4. **पीरियॉडिक लेबर फोर्स सर्वे (PLFS).** (2024). *वार्षिक रिपोर्ट (जुलाई 2023 - जून 2024)*. सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार. [पृष्ठ संख्या 92-110].

•